॥ एकांकी ॥

भूमिका

श्रव्य (पाठ्य) काव्य एवं दृश्य काव्य, साहित्य के ये दो रूप माने जाते हैं। श्रव्य काव्य का पूरा आनन्द सुनकर अथवा पढ़कर लिया जाता है, पर दृश्य काव्य का पूरा आनन्द अभिनय द्वारा ही सम्भव है।

श्रव्य (पाठ्य) काव्य

आज से बहुत पहले जब सिनेमा, टी0 वी0 का प्रचलन नहीं था, मनुष्य साहित्य के द्वारा मन-बहलाव करता था। वह उपन्यास, कहानी पढ़ता था। इससे उसका मनोरञ्जन और ज्ञानवर्द्धन होता था, लेकिन आज मनुष्य के पास इतना समय कहाँ? 20वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध तो दृश्य-श्रव्य माध्यमों के अभूतपूर्व विकास का साक्षी रहा है। इससे न केवल सूचना और ज्ञान के क्षेत्र का अद्‌भुत विस्तार हुआ है, बल्कि इसने साहित्य और दूसरी कला-विधाओं को काफी हद तक अपने दबाव में लिया है। ऐसी स्थिति में साहित्य-सेवियों ने छोटे-छोटे प्रगीतों, कहानियों, लघु कथाओं और कम समय में अभिनीत होनेवाले नाटकों की आवश्यकता समझी। आधुनिक मानव भी समयाभाव के कारण चलते-फिरते अपनी थकान भुलाने के लिए, मन बहलाने के लिए छोटा-से-छोटा मनोरञ्जक साहित्य पढ़ना चाहता है। एकांकी नाटकों का उद्‌भव भी इसी कारण समझा जाता है।

दृश्य काव्य

समय के बदलते चक्र में मानव की रुचियों में भी परिवर्तन हुआ जिसके परिणामस्वरूप नाट्य-विधा का प्रादुर्भाव हुआ। नाटक एक दृश्य विधा है और चलचित्रों के पहले तो यह एकमात्र दृश्य काव्य विधा थी। मनुष्य के पास पहले काफी समय रहता था, जिस कारण नाट्य-विधा श्रव्य काव्य ही बनी रही, लेकिन जैसे-जैसे उसके पास समयाभाव होता गया, वैसे-वैसे इसके स्वरूप में भी परिवर्तन होता गया। यही कारण है कि आज नाटक देखा और सुना जाता है। दृश्य काव्य के अन्तर्गत नाटक के कई भेद किये गये हैं, जिन्हें रूपक और उपरूपक की संज्ञा प्रदान की जाती है। चूँकि एकांकी भी नाटक का ही एक प्रकार है, इसलिए इसे भी दृश्य काव्य ही कहा जायगा।

एकांकी का स्वरूप

एक अंकवाली संक्षिप्त नाट्यकृति को 'एकांकी' कहा जाता है, जिसमें जीवन की किसी एक घटना का चित्रण होता है। किसी जीवन्त परिस्थिति को पात्रों और घटना के माध्यम से कौतूहलपूर्ण ढंग से उपस्थित करना ही एकांकी का मुख्य लक्ष्य होता है। इसमें जीवन का आंशिक रूप ही प्रस्तुत किया जाता है। एकांकी लघुकाय होते हुए भी अपने-आप में स्वतन्त्र और पूर्ण होता है। इसके लिए एक मार्मिक घटना, एक भाव, एक चरित्र, एक विचार अथवा जीवन का एक पक्ष ही पर्याप्त है। इस संक्षिप्त नाट्यवस्तु को एकांकी इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि उसमें प्रभावान्विति की सृष्टि होती है तथा एकांकी के सभी तत्त्व इस प्रकार समायोजित होते हैं कि उनका प्रभाव किसी एक बिन्दु पर जाकर केन्द्रित हो जाता है। एक विशेष सीमा तक पाठक अपनी कल्पना के सहारे दृश्यों के मानसिक चित्र में रमते हुए 'एकांकी' का आस्वादन करने में समर्थ रहता है।

यदि एकांकी को विशेष नाट्य-भेद माना जाय तो प्राचीन संस्कृत साहित्य के अनेक पुराने भेद एकांकी कहे जा सकते हैं, लेकिन वास्तविकता यह है कि आज का एकांकी अंग्रेजी के 'वन ऐक्ट प्ले' पर आधारित है। उसकी रचना-पद्धति पर यूरोपीय नाट्य-कला का अत्यधिक प्रभाव है, अतः एकांकी उसी प्रकार एक अंकवाले रूपक अथवा उपरूपक की अपेक्षा 'वन ऐक्ट प्ले' के अधिक सन्निकट है, जिस प्रकार आज की कहानी प्राचीन संस्कृत कथा से अधिक यूरोप की 'शार्ट स्टोरी' के निकट है।

एकांकी का जो आधुनिकतम स्वरूप आज हमारे सामने है उसका जन्म 19वीं शताब्दी के अन्त में ही हो चुका था। भारतीय संस्कृत नाट्यशास्त्र से प्रभावित इस युग के भक्तिपरक, पौराणिक, ऐतिहासिक, राष्ट्रीय एवं सामाजिक एकांकी प्रयोग की दृष्टि से अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं; क्योंकि इन्हीं के द्वारा भावी एकांकी के विकास की व्यापक पृष्ठभूमि का निर्माण हुआ है। आज के एकांकियों के स्वरूप पर दृष्टिपात करें तो उसमें प्रायः युग की नयी कुण्ठाओं, वर्जनाओं और विडम्बनाओं की अभिव्यक्ति के प्रति विशेष आग्रह दिखायी पड़ता है।

एकांकी और नाटक में अन्तर

उपन्यास और कहानी की भाँति नाटक और एकांकी केवल परिमाण की लघुता या विस्तार के कारण ही नहीं, बल्कि अन्य अनेक कारणों से भी भिन्नता रखते हैं। मुख्य रूप से इनमें दो प्रकार के अन्तर हैं—

आन्तरिक अन्तर—मुख्य रूप से एकांकी दृश्य काव्य है, पर आज के व्यस्त युग में अन्य साहित्यिक विधाओं की भाँति एकांकी दृश्य ही नहीं, पाठ्य भी होते हैं जिनका रस पढ़कर भी प्राप्त किया जा सकता है। एकांकी में पूरा आनन्द तभी प्राप्त होता है जब उसे रंगमंच पर अभिनीत होते हुए देखा जाय। पाठक उसका अभिनेता होता है और दर्शक भी। एकांकी के पाठक को अपनी कल्पना से घटनास्थल को साकार करना पड़ता है अर्थात् वह अपने मस्तिष्क में रंगमंच की कल्पना कर लेता है।

एकांकी जीवन की एक ही मूल संवेदना की ऐसी झलक प्रस्तुत करता है, जिनमें एक अंक के कुछ दृश्यों, कुछ पात्रों और कुछ घटनाओं के माध्यम से उनके विराट् और व्यापक रूप की 'झाँकी' मिल जाय। संवेदना से तात्पर्य उस मर्म-बिन्दु से है, जिसे उद्घाटित करना लेखक को अभीष्ट होता है। एक ही विशिष्ट संवेदना का सजीव और प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत करना ही एकांकीकार का उद्देश्य है जिसके लिए वह कथावस्तु, चरित्र एवं संवाद आदि की रोचक, मार्मिक और चुटीली योजना करता है।

यद्यपि नाटक और एकांकी दोनों ही दृश्य काव्य के भेद हैं, दोनों में कथावस्तु, पात्र और संवाद आदि की योजना होती है, दोनों में अभिनय तत्त्व का पूरा निर्वाह अपेक्षित है, फिर भी दोनों में कुछ आन्तरिक भेद उपस्थित रहते हैं।

बहिरंग अन्तर—नाटक और एकांकी में भिन्नता के सम्बन्ध में हम देखते हैं कि उपन्यास और नाटक में एक साथ अनेक सन्देशों, प्रभावों और समस्याओं का निर्वाह सम्भव है, लेकिन एकांकी में केवल एक ही विशिष्ट सन्देश, प्रभाव और समस्या की झलक दिखायी देती है। इस मौलिक अन्तर को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि मात्र एक छोटा नाटक एकांकी नहीं हो सकता, जिस प्रकार एक बड़े एकांकी को नाटक कहना समीचीन नहीं है।

एकांकी में संक्षिप्त और एक ही कथावस्तु होती है, प्रासंगिक कथावस्तु के लिए उसमें कोई स्थान नहीं है, जबकि नाटक में लम्बी कथावस्तु होती है, जिसमें आधिकारिक और प्रासंगिक कथावस्तु साथ-साथ चलती है। नाटकों की अर्थ-प्रकृतियों, कार्यावस्थाओं और सन्धियों की योजना के लिए भी एकांकी में कोई स्थान नहीं है।

एकांकी में एक अंक होता है, पर नाटक में पाँच से दस अंक तक होते हैं। एकांकी में पात्रों की संख्या सीमित होती है, पर नाटक में अनेक पात्र होते हैं, जो प्रमुख पात्र के चरित्र-विकास में सहायक होते हैं।

आकार और उद्देश्य में कहानी के बहुत निकट होते हुए भी एकांकी की यह भिन्नता स्पष्ट है कि कहानीकार को घटना, पात्र, वातावरण और समस्याओं के सम्बन्ध में अपनी ओर से कहने का पर्याप्त अवसर रहता है, लेकिन एकांकीकार को ये सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं। उसे केवल संवादों के सहारे घटना-चक्र, चरित्र-विकास, अन्तर्द्वन्द्व, सन्देश, उद्देश्य आदि का सारा स्वरूप प्रत्यक्ष कराना होता है; केवल कहीं-कहीं संक्षिप्त रंगमंच निर्देशों के माध्यम से वह अभिनय का संकेत कर सकता है। कहने का तात्पर्य है कि कहानीकार की अपेक्षा एकांकीकार का शिल्प-निर्वाह अधिक दक्षता का कार्य है। इस प्रकार एकांकी और नाटक में पर्याप्त भिन्नता है।

एकांकी के तत्त्व

एकांकी के तत्त्वों के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद हैं। विभिन्न विद्वानों ने इसमें तीन से लेकर दस तत्त्वों को माना है। पाठ्यक्रम में निर्धारित एकांकियों के अन्तर्गत निम्नलिखित छह तत्त्वों को मान्यता दी गयी है—

(1) कथावस्तु, (2) पात्र एवं चरित्र-चित्रण (3) संवाद (4) भाषा-शैली (5) देश-काल और वातावरण (6) उद्देश्य।

1. कथावस्तु—जिस कथा के आधार पर एकांकी की रचना एवं प्रस्तुति की जाती है, उसे एकांकी की कथावस्तु कहते हैं। विषय के अनुरूप एकांकी की कथावस्तु विभिन्न प्रकार की होती हैं; जैसे—पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक, काल्पनिक आदि। कथावस्तु एकांकी की मूल संवेदना है। एकांकीकार जिस विशेष उद्देश्य से किसी विशिष्ट भाव,

विचार अथवा समस्या को अभिव्यक्त करना चाहता है, उसी के अनुरूप कथावस्तु को आरम्भ से अन्त तक घुमाव-फिराव के नाटकीय मोड़ों के बीच चमत्कारपूर्ण वेग के साथ गठित करता है।

एकांकी में कथा का प्रारम्भ इस प्रकार होता है कि दर्शक उसकी ओर सहज में ही आकृष्ट हो जाता है, उसमें उसका मन रम जाता है। एकांकीकार को बराबर ध्यान रखना पड़ता है कि दर्शक का मन कहीं भी उचटने न पाये अर्थात् कौतूहलता की भावना बनी रहे और जहाँ यह भावना अपनी चरम स्थिति तक पहुँचती है, वहीं प्रायः एकांकी समाप्त हो जाता है। कथानक के नियोजन पर ही एकांकी की सफलता निर्भर करती है। वस्तुतः कथानक या कथावस्तु के बिना एकांकी का कोई अस्तित्व ही नहीं है।

श्रीपति शर्मा का मानना है कि एकांकी में कथावस्तु नाममात्र को ही रहती है, परन्तु जैसे बरगद का छोटा बीज महान् वृक्ष का आकार धारण कर लेता है उसी प्रकार कथा का लघु-से-लघु अंश कलाकार की सफल तूलिका से एक सुन्दर कृति के रूप में परिणत हो जाता है। डॉ० रामकुमार वर्मा ने लिखा है कि घटना को प्रभावशाली बनाने के लिए उसका ऐसा अंश चुना जाता है, जिसमें वह अच्छी या बुरी हो सकती है।

एकांकी में मुख्यतः आरम्भ, उत्कर्ष और अन्त तीन कथास्थितियाँ होती हैं, लेकिन सुविधा के विचार से इसे चार अवस्थाओं में रख सकते हैं—(अ) आरम्भ, (ब) विकास, (स) चरमोत्कर्ष, (द) समाप्ति अथवा परिणति।

(अ) आरम्भ—एकांकी आरम्भ में परिचयात्मक होता है अर्थात् आरम्भ की अवस्था एकांकी की कथावस्तु की पृष्ठभूमि तैयार करती है। मुख्य घटना, समस्या, पात्र का परिचय और उद्घाटन ही इस भाग की विशेषता है। इसके अन्तर्गत वह पीठिका तैयार करनी पड़ती है, जिस पर एकांकी का अन्त प्रतिष्ठित होता है। उपेन्द्रनाथ 'अश्क' द्वारा लिखित एकांकी **'लक्ष्मी का स्वागत'** में **भाषी** और **माँ** के मध्य हुई प्रारम्भिक वार्त्ता एक प्रकार से एकांकी की पृष्ठभूमि ही है।

(ब) विकास—विकास के अन्तर्गत कार्य-व्यापार अथवा संघर्ष का रूप खुलकर सामने आता है। यहाँ पात्रों, आदर्शों, अधिकारों और सिद्धान्तों में विरोध अथवा द्वन्द्व एकांकीकार दिखाना चाहता है। उसका सारा द्वन्द्व संवादों के द्वारा स्पष्ट हो जाता है। द्वन्द्व से कथानक में नाटकीयता उत्पन्न हो जाती है और एकांकी रुचिकर हो जाता है।

(स) चरमोत्कर्ष—एकांकी यहाँ परिस्थितिजन्य प्रभावों को एकत्र करता हुआ अत्यन्त तीव्रता से उत्कर्ष बिन्दु पर पहुँचता है। इसीलिए कहा जा सकता है कि एकांकी उस छोटी दौड़ की प्रतियोगिता की भाँति है, जिसमें आरम्भ से लेकर अन्त तक दौड़ की तीव्रता में कहीं कमी नहीं आती। यह वह स्थल है, जहाँ एकांकी अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर पाठक या दर्शक की उत्सुकता को विशेष तीव्र एवं संवेदनशील बनाता है। यहाँ कौतूहल अपने चरम बिन्दु पर पहुँच जाता है। घटना एक आकस्मिक परिणाम की ओर अग्रसर होने लगती है।

(द) समाप्ति अथवा परिणति—परिणति या समापन का स्थल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यहीं पहुँचकर एकांकी अपनी सम्पूर्ण संवेदनशीलता, प्रभावोत्पादकता एवं पूर्णता का परिचय देता है। प्रभाव की पूर्णता समापन का लक्ष्य है। सारी जिज्ञासा की वृद्धि और कौतूहल की समाप्ति यहीं आकर होती है। वही एकांकी कलापूर्ण है जिसमें चरम सीमा पर ही एक गूढ़ प्रभाव की व्यंजना के साथ ही कथावस्तु समाप्त हो जाती है। जैसे डॉ० रामकुमार वर्मा के **'दीपदान'** में **बनवीर** के हाथों **चन्दन** की हत्या ही एकांकी की परिणति है।

2. पात्र एवं चरित्र-चित्रण—एकांकी के पात्रों एवं उनके चरित्रों के आधार पर ही सम्पूर्ण एकांकी के भाव एवं कला-पक्ष की अभिव्यक्ति होती है। इसमें एक मुख्य पात्र होता है, शेष पात्र एकांकी की कथावस्तु के अनुसार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मुख्य पात्र के चरित्र को उभारने में ही सहायक होते हैं। एकांकी में पात्रों की संख्या जितनी कम होती है, उतना ही परिस्थिति का रंग उभरकर सामने आता है। अधिक पात्रों के होने से कथा और कथा की मूल संवेदना के उलझ जाने का भय रहता है। एकांकी के पात्रों का चरित्र-चित्रण एकांकीकार अपनी मौलिक रचना-प्रतिभा, शैली, संवाद आदि के आधार पर करता है। श्रेष्ठ एकांकी में पात्रों का चयन अत्यन्त सुनियोजित होता है और पात्रों के चरित्र-चित्रण में सहजता, स्वाभाविकता, सजीवता आदि का समावेश रहता है।

एकांकी के मूल भाव के अनुसार ही पात्रों के व्यक्तित्व, चरित्र एवं प्रवृत्तियों का निर्धारण होता है। एकांकी की मूल भावना को उद्दीप्त करने के लिए दो-एक गौण पात्रों की भी योजना एकांकीकार को करनी पड़ती है। गौण पात्रों के चयन में यह ध्यान रखना चाहिए कि उनमें से प्रत्येक के चरित्र में कोई-न-कोई व्यक्तिगत विशेषता अवश्य हो। इसी विशेषता के कारण एक पात्र का दूसरे पात्र से संघर्ष होता है। भिन्न-भिन्न स्वभाव एवं संस्कार के पात्रों के पारस्परिक संघर्ष एवं सम्पर्क से एकांकी में सक्रियता प्रत्येक क्षण बनी रहती है। पात्रों का यही जीवन-संघर्ष विविध सन्दर्भों में प्रस्तुत करना एकांकीकार के शिल्प की कुशलता है।

आज के बौद्धिक युग का दर्शक या पाठक चारित्रिक वैचित्र्य को देखना व समझना चाहता है, इसलिए एकांकी के पात्र जीते-जागते, चलते-फिरते, अपनी निजी प्रेरणा और अभिरुचि से परिचालित दीखने चाहिए। नाटकों में नायक और उसके

सहायकों का चरित्र-चित्रण मूलतः घटनाओं के माध्यम से किया जाता है, जबकि एकांकी के पात्रों का चरित्र नाटकीय परिस्थितियों और व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व के सहारे सांकेतिक रहता है। सच तो यह है कि एकांकी में पात्रों की चरित्रगत मूल विशेषता के उद्‌घाटन द्वारा ही उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झलक दिखायी देनी चाहिए। डॉ० रामकुमार वर्मा की **'दीपदान'** एकांकी की प्रमुख पात्र **पन्ना धाय** द्वारा अपने पुत्र **चन्दन** का बलिदान ही उसके समग्र चरित्र, स्वभाव एवं व्यक्तित्व की झलक प्रस्तुत कर देता है।

3. संवाद– संवाद के मुख्यतः दो कार्य होते हैं—पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उद्‌घाटित करना तथा कथा-प्रवाह को आगे बढ़ाना। परिस्थिति एवं पात्रों को जोड़ने के लिए और आन्तरिक भावों एवं मनोवृत्तियों के उद्‌घाटन के लिए संवाद तत्त्व की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। आवश्यकता से अधिक वार्त्तालाप उबा देनेवाला होता है और औचित्य का विचार न करके की गयी संवाद-योजना एकांकी की प्रभावान्विति में बाधा डालती है। अतः पात्र की शिक्षा-दीक्षा, देश-काल और सामयिक स्थिति के अनुरूप ही संवादों की योजना की जानी चाहिए। संवादों के द्वारा एक पात्र जो कुछ बोलता है, वह अर्थपूर्ण एवं उसकी विचारधारा का परिचायक होता है। एक पात्र द्वारा बोले गये शब्दों की प्रतिक्रिया दूसरे पात्रों पर होती है और वे चुभनेवाले होते हैं। इस तरह संवादों द्वारा कथावस्तु गतिशील हो उठती है।

चरित्रप्रधान एकांकियों में व्यक्तित्व और उसकी प्रवृत्तियों का परिचय देने के लिए संवाद अथवा कथोपकथन विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। संवाद द्वारा ही चारित्रिक विशेषताएँ प्रकट होती हैं। अभिवादन, सम्बोधन, प्रेम, क्रोध आदि को व्यक्त करने के लिए औचित्य एवं मर्यादा को ध्यान में रखकर भाषा का प्रयोग आवश्यक है। कथानक को निरन्तर सक्रिय और गतिशील बनाये रखना तथा पात्रों की स्वभावगत चारित्रिक विशेषताओं को उभारते रहना और स्वाभाविक रूप से परिणति की ओर अग्रसर करते रहना ही संवाद-योजना का लक्ष्य होता है। एकांकी में प्रत्येक संवाद सप्रयोजन होना चाहिए, निरर्थक और अनावश्यक वार्त्तालाप को कहीं स्थान नहीं मिलना चाहिए। एकांकी में जिज्ञासा और कुतूहल को जगाने के लिए बहुधा नाटकीय संवादों की योजना करनी पड़ती है। कथावस्तु, विषय प्रतिपादन एवं योजना की दृष्टि से संवाद की भाषा को व्यावहारिक स्वरूप भी देना पड़ता है। समय के बदलते चक्र में पात्रों के लड़ाई-जैसे स्थूल कार्य-व्यापारों को संकेतों के द्वारा व्यक्त किया जाने लगा। इन संकेतों को भी अब संवादों के द्वारा व्यक्त किया जाता है। प्रभावी संवाद को चुस्त, चुटीला, मार्मिक और सुननेवाले पात्र के भीतर उद्वेग, उत्तेजना एवं प्रतिक्रिया जगाने में सक्षम होना चाहिए। जैसे कि जगदीशचन्द्र माथुर की एकांकी **'रीढ़ की हड्डी'** में **उमा** कहती है—"क्या जवाब दूँ बाबू जी! जब कुर्सी-मेज बिकती है, तब दुकानदार कुर्सी-मेज से कुछ नहीं पूछता, सिर्फ खरीदार को दिखला देता है। पसन्द आ गयी तो अच्छा है, वरना·····।" शिष्ट हास्य एवं व्यंग्य से समन्वित होकर संवाद यहाँ सजीव हो उठा है।

4. भाषा-शैली–भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करने का माध्यम भाषा है और अभिव्यक्ति का ढंग शैली है। एकांकीकार विषय-तत्त्व के अनुरूप विशिष्ट भाषा-शैली को अपनाता है। एक ही विषयवस्तु को लेकर विभिन्न विधाओं की कथा लिखी जा सकती है, लेकिन उसी विषयवस्तु को कवि अपने ढंग से प्रस्तुत करता है तो नाटककार अपने ढंग से और एकांकीकार अपने ढंग से। अपने संवादों की भाषा-शैली के द्वारा एक कहानीकार उसी विषयवस्तु को किसी अन्य परिणति तक पहुँचाता है और एकांकीकार किसी अन्य परिणति तक। विषयवस्तु के प्रति लेखक का जैसा दृष्टिकोण होता है, उसकी अभिव्यक्ति के लिए वह वैसा ही माध्यम भी चुनता है। माध्यम के भिन्न हो जाने से भाषा-शैली भी भिन्न हो जाती है। सरल और बोधगम्य भाषा के द्वारा एकांकी को प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

साधारण-से-साधारण कथावस्तु में भी कुशल लेखक अपनी सुन्दर भाषा-शैली से प्राण-प्रतिष्ठा कर देता है। ध्यातव्य है कि एकांकी की भाषा का प्रयोग पात्र की शिक्षा, संस्कृति, वातावरण एवं परिस्थिति के अनुरूप ही होना चाहिए। यदि पात्र का सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर ऊँचा है तो भाषा शिष्ट और शैली परिष्कृत ही होती है। यदि उसका सांस्कृतिक और सामाजिक स्तर नीचा है तो उसकी भाषा और शैली में ये गुण दिखायी नहीं देंगे। सेठ गोविन्ददास द्वारा लिखित एकांकी **'सच्चा धर्म'** में **दिलावर खाँ** और **रहमान बेग** के संवादों तथा **पुरुषोत्तम** और उसकी पत्नी **अहिल्या** के संवादों की भिन्नता में यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

5. देश-काल और वातावरण–एकांकी में किसी विशेष देश-काल अथवा वातावरण से सम्बन्धित पात्रों एवं घटनाओं का चित्रण होता है। यह चित्रण सजीव एवं स्वाभाविक तभी हो सकता है जब एकांकी की भाषा, पात्रों की वेश-भूषा, पात्रों की भाषा को उसी काल के अनुरूप रखा जाय। इससे उस काल का सजीव एवं स्वाभाविक चित्र उपस्थित होता है और दर्शकों की रसानुभूति तीव्र हो जाती है। जिस देश और काल के समाज को लेकर एकांकी रचा जाता है, उससे सम्बन्धित वातावरण, इतिहास, संस्कृति, वेश-भूषा, खान-पान, रीति-रिवाज आदि का सहज, स्वाभाविक और प्रामाणिक चित्र खींचा जाता

है। सम्पूर्ण परिस्थितियों की योजना साभिप्राय और क्रमिक ढंग से की जाती है और प्रकृति, ऋतु, दृश्य आदि का अत्यन्त संक्षिप्त और सांकेतिक रूप में वर्णन करके किसी घटना अथवा परिणाम को सजीव एवं यथार्थ बना दिया जाता है। इसके अभाव में कृत्रिमता, काल-दोष, अनौचित्य का प्रवेश न हो जाय, इस दृष्टि से देश-काल अथवा वातावरण के निर्वाह का एकांकी में अपना विशिष्ट महत्त्व है।

डॉ0 रामकुमार वर्मा के '**दीपदान**' एकांकी को पढ़ते या देखते समय वातावरण के निर्वाह की दृष्टि से हम कल्पना में भारत की 16वीं शताब्दी के राजपूत सामन्ती युग में पहुँचकर प्रमुख पात्र **पन्ना धाय** के चरित्र में एक ऐसी स्वामिभक्ति पाते हैं, जो उस युग की गौरवमय विशेषता थी। विष्णु प्रभाकर की '**सीमा-रेखा**' एकांकी में समसामयिक परिस्थिति का एक चित्र प्रस्तुत करते हुए एकांकीकार संवादों और द्रुत गति से बदलती हुई स्थिति द्वारा ऐसा वातावरण बना देता है, जिसमें **लक्ष्मीचन्द्र, विजय** और **शरतचन्द्र** तीनों भाई के स्वभाव का एकाएक परिवर्तन अत्यन्त स्वाभाविक ही नहीं, बल्कि अपरिहार्य भी दृष्टिगोचर होता है। ऐसे वातावरण-प्रधान एकांकी प्रभाव की दृष्टि से बड़े सजीव और मर्मस्पर्शी होते हैं।

6. उद्देश्य—एकांकी का उद्देश्य पुष्प में गन्ध की भाँति उपस्थित रहता है। जिस एकांकी का उद्देश्य जितना लोकमंगलकारी होता है, उसका साहित्यिक मूल्य भी उतना ही अधिक बढ़ जाता है। एकांकीकार का उद्देश्य पात्रों के माध्यम से व्यंजित होता है। '**हिन्दी साहित्य कोश**' में उद्देश्य तत्त्व के सम्बन्ध में इस प्रकार वर्णित है—*''उद्देश्य वह तत्त्व है, जिसमें लेखक की उस सामान्य या विशिष्ट जीवन-दृष्टि का विवेचन होता है जो उसकी कृति में कथावस्तु के विन्यास, पात्रों की योजना, वातावरण के प्रयोग आदि में सर्वत्र निहित पायी जाती है। इसे लेखक का जीवन-दर्शन या जीवन-दृष्टि या जीवन की व्याख्या या जीवन की आलोचना कह सकते हैं।''* एकांकी का केन्द्रीय भाव ही वह हेतु या उद्देश्य है, जिसके लिए एकांकी ली जाती है। प्रत्येक एकांकी के पीछे कोई विशेष संवेदना, समस्या, भावना अथवा जीवन-दृष्टि होती है जिसे एकांकीकार सांकेतिक रूप में जाने-अनजाने अभिव्यक्ति देना चाहता है। यही एकांकी में उद्देश्य तत्त्व है, जिसका स्पष्ट उल्लेख न तो आवश्यक है और न उपयोगी, पर जिसका स्वर एकांकी में आदि से अन्त तक किसी-न-किसी रूप में गूँजता रहता है।

एकांकी के अन्य तत्त्व

(अ) अन्तर्द्वन्द्व—बाह्य जीवन में जिस प्रकार परस्पर विरोधी पात्रों के बीच घटनाओं का संघर्ष दिखायी देता है, उसी प्रकार पात्रों के भाव-जगत् में परस्पर विरोधी वृत्तियों का संघर्ष चलता रहता है, जिसे अन्तर्द्वन्द्व कहा जाता है। भावुक और उत्तेजनाशील पात्रों में आन्तरिक द्वन्द्व बड़ा प्रबल होता है। **डॉ0 रामकुमार वर्मा** के अनुसार—*''नाट्य-कला की दृष्टि से अन्तर्द्वन्द्व का बड़ा महत्त्व है। कथावस्तु तीव्र गति से चरम सीमा की ओर बढ़ती है। जैसे-जैसे कथावस्तु चरम सीमा की ओर बढ़ती जाती है, वैसे ही पात्रों का अन्तर्द्वन्द्व दिन के प्रकाश की भाँति प्रत्यक्ष होता जाता है। पाठक या दर्शक भी अन्तर्द्वन्द्व के समाप्त होते ही अनुभव करता है कि समस्त घटनाएँ बिजली की भाँति उसके हृदयाकाश पर तड़पकर विलीन हो गयीं।''* आन्तरिक द्वन्द्व के द्वारा ही पात्रों के चरित्रगत विशेषताओं का स्वरूप एवं विकास प्रत्यक्ष होता है।

सेठ गोविन्ददास की एकांकी '**सच्चा धर्म**' में सम्पूर्ण एकांकी **अहिल्या** और **पुरुषोत्तम** के अन्तर्द्वन्द्व में ही चरमोत्कर्ष पर पहुँचती है और जब **पुरुषोत्तम** का अन्तर्द्वन्द्व समाप्त होता है तो वह परिणति के रूप में दर्शकों को आनन्द से आप्लावित कर देता है। उपेन्द्रनाथ 'अश्क' की '**लक्ष्मी का स्वागत**' एकांकी में **रौशन** का अन्तर्द्वन्द्व, जगदीशचन्द्र माथुर की एकांकी '**रीढ़ की हड्डी**' में **उमा** का अन्तर्द्वन्द्व, विष्णु प्रभाकर की एकांकी '**सीमा-रेखा**' में **शरतचन्द्र** का अन्तर्द्वन्द्व अनेक मूल विशेषताओं को उद्घाटित करता है।

(ब) संकलन-त्रय— संकलन-त्रय का तात्पर्य कार्य, स्थान और काल के संकलन से है। कथावस्तु एक ही कृत्य के सम्बन्ध में हो, पूरी घटना एक ही स्थान में घटित हो, दृश्य-परिवर्तन कम-से-कम हो, साथ ही एकांकी की मूल घटना जितने काल में घटित हो, उतने ही काल में उसका अभिनय भी सम्भव हो। स्थान-संकलन और काल-संकलन से यही तात्पर्य है। कार्य-संकलन से तात्पर्य यह है कि कार्य-व्यापार में क्रमिक व्यवस्था हो, बिखराव न हो, स्वाभाविक क्रम का निर्वाह हो। आजकल विद्वान् संकलन-त्रय या संकलन-द्वय के नियम को आवश्यक नहीं मानते, जबकि इसके बिना एकांकी की पूर्ण सफलता में सन्देह रह जाता है।

स्थान-संकलन और काल-संकलन की आवश्यकता के सम्बन्ध में मतभेद रहा है, जबकि कार्य-संकलन की अनिवार्यता के विषय में सभी सहमत हैं। **डॉ0 रामकुमार वर्मा** के अनुसार संकलन-त्रय एकांकी-कला की मूल आत्मा है। **सेठ गोविन्ददास** ने संकलन-त्रय में से केवल संकलन-द्वय (i) एक ही काल की घटना (ii) एक ही कृत्य को एकांकी के शिल्प-विधान में अनिवार्य माना है। बाद में उन्होंने एकांकी शिल्प में से काल-संकलन को भी पृथक् कर दिया तथा इसकी पूर्ति के लिए

रचना-विधान में उपक्रम एवं उपसंहार की प्रतिष्ठा की। **डॉ0 नगेन्द्र** का मानना है कि एकांकी में हमें जीवन का क्रमबद्ध विवेचन न मिलकर उसके एक पहलू, एक महत्त्वपूर्ण घटना, एक विशेष परिस्थिति अथवा उद्दीप्त रूप का चित्र मिलेगा; जिसके लिए एकता, एकाग्रता अनिवार्य है। डॉ0 नगेन्द्र एकांकी के लिए स्थान एवं काल-संकलन को आवश्यक नहीं मानते। कई अन्य विद्वान् भी स्वीकार करते हैं कि यह एकांकीकार के कौशल पर निर्भर करता है।

वास्तविकता यह है कि आज के वैज्ञानिक युग में दृश्य-परिवर्तन के अनेक साधन सुलभ होते जा रहे हैं। पहले यूरोपीय नाटकों में संकलन-त्रय की आवश्यकता रंगमंच पर दृश्य-परिवर्तन प्रदर्शित करने की तत्कालीन कठिनाइयों को ध्यान में रखकर समझी गयी थी। अतः अब एकांकी की कथावस्तु के गठन में कार्य-संकलन के प्रति ही विशेष सावधानी अपेक्षित है, स्थान और काल के संकलन का उतना महत्त्व नहीं रह गया है।

संकलित एकांकियों के घटना-प्रसंग एक-एक कमरे में सीमित हैं। सभी एक दृश्यवाले एकांकी हैं, लेकिन सेठ गोविन्ददास के 'सच्चा धर्म' एकांकी में तीन दृश्य हैं। इस एकांकी की कथा पुरुषोत्तम के मकान के एक कमरे में और दिल्ली की एक गली, दो स्थानों में घटित होती है, फिर भी कथा में एकसूत्रता बनी रहती है।

(स) अभिनेयता—यद्यपि अनेक विद्वानों ने एकांकी के इस तत्त्व की अनिवार्यता को मान्यता नहीं दी है, तथापि इसके महत्त्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि एकांकी की प्रस्तुति अभिनय के द्वारा ही की जाती है। जिस एकांकी में अभिनय सम्बन्धी तत्त्वों का समावेश न हो, वह एकांकी दर्शकों तक न पहुँच पाने के कारण दृश्यात्मक साहित्य के रूप में अर्थहीन हो जाता है। अतः एकांकी में अभिनेयता पर भी विचार किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है। एकांकीकार को एकांकी की कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, संवाद-योजना, भाषा-शैली, देश-काल एवं वातावरण तथा उद्देश्य, सभी की योजना इसमें करनी चाहिए, जिससे अभिनय में कोई असुविधा न हो। एकांकी को अभिनेय बनाने के लिए एकांकी के आकार की संक्षिप्तता, घटना-व्यापारों की व्यवस्था, पात्रों की स्वाभाविक वेश-भूषा, बोलचाल और भाव-व्यंजना, संवादों की रोचकता और सरसता, भाषा-शैली की रोचकता एवं नाटकीयता, वातावरण का उचित निर्वाह, उद्देश्य और सांकेतिक व्यञ्जना तथा आदि से अन्त तक उत्सुकता जगानेवाली गतिशीलता के प्रति एकांकीकार को सचेत रहना चाहिए। अतः एकांकी के अभिनेयता तत्त्व को भुलाया नहीं जा सकता, क्योंकि यही तो एकांकी का प्राण है।

एकांकी के प्रकार

विद्वानों ने 'एकांकी' के अनेक भेदों का उल्लेख किया है, परन्तु साहित्य की दृष्टि से रचना प्रकार का वर्गीकरण मुख्यतः तीन दृष्टियों से किया जाता है—

(अ) विषय की दृष्टि से, (ब) प्रतिपाद्य की दृष्टि से, (स) शैली अथवा शिल्प की दृष्टि से।

(अ) विषय की दृष्टि से एकांकी को दस कोटियों में बाँटा जा सकता है–

1. सामाजिक एकांकी—सामाजिक समस्याओं को आधार बनाकर सामाजिक एकांकी की रचना की जाती है। सामाजिक एकांकी का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। सामाजिक जीवन के विविध पक्ष, यथा—प्रेम-विवाह, वर्ग-संघर्ष, पीढ़ी-संघर्ष तथा अस्पृश्यता इसके अन्तर्गत आते हैं। जैसे—**'फैसला'** (विनोद रस्तोगी), **'लक्ष्मी का स्वागत'** (उपेन्द्रनाथ 'अश्क')।

2. ऐतिहासिक एकांकी—इतिहास अथवा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के आधार पर लिखे गये एकांकी ऐतिहासिक एकांकी होते हैं। जैसे—**'दीपदान'** (डॉ0 रामकुमार वर्मा)।

3. मनोवैज्ञानिक एकांकी—मनोविज्ञान के आधार पर रचित एकांकी मनोवैज्ञानिक एकांकी होते हैं। जैसे—**'मकड़ी का जाला'** (जगदीशचन्द्र माथुर)।

4. राजनैतिक एकांकी—किसी राजनैतिक गतिविधि पर प्रकाश डालनेवाले एकांकी राजनैतिक एकांकी होते हैं। जैसे—**'पिशाचों का नाच'** (उदयशंकर भट्ट), **'सीमा-रेखा'** (विष्णु प्रभाकर)।

5. चारित्रिक एकांकी—जिन एकांकियों का मूलोद्देश्य किसी चरित्र-विशेष का सौन्दर्य या असौन्दर्य अनुभूत कराना होता है। जैसे—**'उत्सर्ग'** (डॉ0 रामकुमार वर्मा)।

6. पौराणिक एकांकी—पुराणों पर आधारित कथावस्तु को लेकर लिखे गये एकांकी पौराणिक एकांकी होते हैं। जैसे—**'मुद्रिका'** (सद्गुरुशरण अवस्थी), **'राजरानी सीता'** (डॉ0 रामकुमार वर्मा)।

7. सांस्कृतिक एकांकी—सांस्कृतिक समस्या पर आधारित एकांकी सांस्कृतिक एकांकी होते हैं। जैसे—**'प्रतिशोध'** (डॉ0 रामकुमार वर्मा), **'सच्चा धर्म'** (सेठ गोविन्ददास)।

8. आंचलिक एकांकी—किसी अंचल-विशेष की घटना पर आधारित वहाँ की लोकभाषा, रीति-व्यवहार, रहन-सहन, भूगोल आदि का चित्रण आंचलिक एकांकी में किया जाता है।

9. दार्शनिक एकांकी—दार्शनिक विषयों पर आधारित दार्शनिक एकांकी है। यथा—उदयशंकर भट्ट, लक्ष्मीनारायण मिश्र दार्शनिक एकांकीकार हैं।

10. तथ्यपरक एकांकी—एकांकीकार किसी विशेष सन्देश अथवा उद्देश्य पर बल न देकर किसी प्रसंग का नाटकीय चित्र अंकित करके प्रभाव अथवा निष्कर्ष ग्रहण करने का दायित्व पाठक या दर्शक पर छोड़ देता है। जैसे—'**मानव-मन**' (सेठ गोविन्ददास)।

(ब) प्रतिपाद्य की दृष्टि से एकांकी के अनेक भेदों की कल्पना की जा सकती है, यद्यपि इनकी कोई निश्चित सीमा नहीं निर्धारित की जा सकती। इसके अन्तर्गत समस्यामूलक एकांकी, हास्य एकांकी, व्यंग्य एकांकी, विचारपरक एकांकी और वैज्ञानिक एकांकी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। समस्यामूलक एकांकी में वैयक्तिक अथवा सामाजिक समस्या से सम्बन्धित उलझनों के चित्रण तथा कहीं-कहीं उसके सुलझाने का संकेत देते हुए एकांकी का गठन होता है। आज के समस्या-संकुल जीवन में ऐसे एकांकी बड़े प्रभावपूर्ण और भावोत्तेजक सिद्ध होते हैं। हास्य एकांकी में हास्य-विनोद का पुट रहता है, एकांकीकार ऐसे घटना-चक्र तथा ऐसे विचित्र मनमौजी पात्रों की सृष्टि करता है, जिससे संवाद पाठक और दर्शक के चित्त में एक प्रकार की गुदगुदी जगाते हुए उसे हँसाते चलते हैं। मनोरञ्जन और नयी स्फूर्ति के प्रेरक ऐसे एकांकी बड़े लोकप्रिय होते हैं। इनमें प्रायः सरल, सहज और उत्तेजनायुक्त वातावरण का निर्वाह होता है।

व्यंग्य एकांकी में हास्य-विनोद के पुट के साथ-साथ व्यक्ति, समाज अथवा परिवार की किसी विषमता अथवा विडम्बना के प्रति तीखा और चुटीला व्यंग्य होता है। एक-एक घटना-व्यापार और संवाद का एक-एक शब्द बाह्य आवरण के पीछे छिपकर झाँकती हुई अनेक ग्रन्थियों और प्रतिक्रियाओं का रोचक तथा सांकेतिक पर्दाफाश करता चलता है। ऐसे एकांकियों की भाषा-शैली दुहरे अर्थ की व्यञ्जना करती हुई पग-पग पर एक नये रहस्य का उद्घाटन करती चलती है।

विचारात्मक एकांकी किसी विशेष बौद्धिक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति करता है। इसके पात्र अपने निजी विचारों को नाटकीय रोचकता के साथ व्यक्त करते हुए किसी विशेष समाधान की ओर संकेत करते हैं। वैज्ञानिक एकांकी आज के विज्ञान-जगत् की किसी पहेली को लेकर प्रयोगशाला के वातावरण की झलक संवादों के माध्यम से देते हैं तथा व्यवहार-जगत् में विज्ञान की चर्चा को मनोरञ्जक रूप प्रदान करते हैं। डॉ0 धर्मवीर भारती का 'सृष्टि का आखिरी आदमी' इसी प्रकार का एकांकी है।

(स) शैली अथवा शिल्प की दृष्टि से एकांकी को चार कोटियों में बाँटा जा सकता है—

(i) स्वप्न रूपक (फैण्टेसी) (ii) प्रहसन (iii) काव्य एकांकी (iv) रेडियो-रूपक। **स्वप्न रूपक** अर्थात् अतिकल्पना प्रधान एकांकी में एकांकीकार बहुत दूर तक अपनी कल्पना का सहारा लेता है। डॉ0 रामकुमार वर्मा का '**बादल की मृत्यु**' ऐसा ही एकांकी है। **प्रहसन** में व्यंग्यात्मक ढंग से व्यंग्य-विनोद और परिहास की सृष्टि की जाती है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का प्रहसन '**अन्धेर नगरी**' प्रसिद्ध है। **काव्य एकांकी** का माध्यम काव्य होता है। वह छन्दबद्ध, तुकान्त और अतुकान्त रूप में हो सकता है। काव्य एकांकी में आवश्यक है कि उसमें नाटकीयता और कवित्व दोनों हो। उदयशंकर भट्ट का **तारा,** भगवतीचरण वर्मा का '**कर्ण**' और सुमित्रानन्दन पन्त का '**रजत शिखर**' काव्य एकांकी है।

रेडियो-रूपक आज का बहुत ही लोकप्रिय प्रकार है। इन एकांकियों की रचना आकाशवाणी पर प्रसारण के लिए की जाती है। इनमें ध्वनि-विशेष के द्वारा अभिनय और क्रिया-व्यापारों का निर्वाह होता है। यहाँ पर श्रोता आँख का काम कान से लेते हैं। विशेष प्रकार की ध्वनियों को सुनकर वे विशिष्ट दृश्य एवं भाव की कल्पना करके इन एकांकियों का रस लेने में समर्थ होते हैं। सुमित्रानन्दन पन्त का '**शिल्पी**' तथा डॉ0 रामकुमार वर्मा का '**बादल की मृत्यु**' इसी प्रकार के एकांकी हैं।

रचना-विधान के अनुरूप एकांकी के एक दृश्यीय, एक पात्रीय तथा अनेक पात्रीय जैसे भेद भी सम्भव हैं। एक पात्रीय एकांकी वे हैं जिनमें केवल एक ही पात्र अपनी विशिष्ट कला से कई पात्रों के संवाद एवं क्रिया-व्यापारों का अभिनय करने में समर्थ होता है। मुख्यतः रेडियो-रूपक के दो भेद होते हैं—ध्वनि रूपक और वृत्त रूपक। ध्वनि रूपक की कथावस्तु वृत्त रूपक की कथावस्तु से भिन्न होती है। ध्वनि रूपक में केवल ध्वनि का महत्त्व होता है तथा वृत्त रूपक में संवाद के बीच-बीच में बहुत-सा वर्णन सूत्रधार के माध्यम से दिया जाता है।

एकांकी के उपर्युक्त प्रकारों के अतिरिक्त अन्य भेद-विभेद व्यक्तिगत और सामाजिक रुचि के अनुरूप किये जा सकते हैं। वैषम्य एकांकी, विद्रूप एकांकी, फीचर, मालावत् एकांकी, दुःखान्त एकांकी, सुखान्त एकांकी, मेलोड्रामिटिक (अति नाटकीय) एकांकी, व्याख्यामूलक एकांकी, आदर्शमूलक एकांकी, अनुभूतिमय एकांकी, आदर्शवादी एकांकी, यथार्थवादी एकांकी, कलावादी एकांकी, प्रगतिवादी एकांकी आदि अनेक प्रकारों की चर्चा भी की जा सकती है।

हिन्दी एकांकी : उद्‌भव और विकास

हिन्दी एकांकी के जन्म के सम्बन्ध में विद्वानों के दो वर्ग हैं। एक वर्ग हिन्दी एकांकी का विकास संस्कृत नाट्य-कला से मानता है तो दूसरा वर्ग एकांकी को पाश्चात्य साहित्य की देन स्वीकार करता है। पाश्चात्य साहित्य में यद्यपि यूनान के नाटकों की परम्परा आरम्भ होती है और कालान्तर में ईसाई आदर्शों के प्रचारार्थ चर्च में अभिनीत धार्मिक अथवा सन्तों के जीवन से सम्बन्धित रहस्य नाटक और रहस्यात्मक नाटक का प्रचलन रहा। क्रमशः 11वीं-12वीं शताब्दी के नीतिपरक नाट्यरूप और प्रासंगिक नाट्यरूप का जन-सामान्य में प्रचार हुआ। इन्हीं आरम्भिक लघु नाट्यरूपों में पाश्चात्य एकांकी का बीज दिखायी दे जाता है।

एकांकी का जो आधुनिकतम रूप आज निश्चित-सा हो गया है, उसकी उपज इंग्लैण्ड में 19वीं शताब्दी के अन्त में 'कर्टेन रेजर' अथवा पट्टोन्नायक से मानी जाती है। कहा जाता है कि उस समय वहाँ एक ऐसा शिष्ट वर्ग था, जो रात्रि में पर्याप्त विलम्ब से भोजन करता है। व्यावसायिक नाटक कम्पनियों के अधिकारी अपना नाटक प्रारम्भ करने के लिए ऐसे लोगों की प्रतीक्षा करते थे, परन्तु समय पर आये हुए दर्शकों का मनोरञ्जन करना भी उनका कर्त्तव्य हो जाता था। अतः वे मुख्य नाटक से पूर्व कुछ छोटे-छोटे नाटकों का प्रदर्शन करते थे। इसे मुख्य पर्दे को उठाने से पूर्व अभिनीत कर लिया जाता था। इसी कारण इन छोटे नाटकों को 'कर्टेन रेजर' नाम दिया गया। धीरे-धीरे यह विधा लोकप्रिय होती गयी।

सन् 1903 में विलियम जेकब की कहानी 'मंकीज पॉ' के आधार पर लुई पार्कर ने एक छोटा कर्टेन रेजर लिखा। दर्शकों ने इसे बहुत अधिक पसन्द किया। पाश्चात्य देशों में पिछली अर्द्ध शताब्दी में इस कला की आशातीत उन्नति हुई और आगे चलकर इसका प्रभाव हिन्दी एकांकी पर पड़ा।

हिन्दी एकांकी के उद्‌भव और विकास का जहाँ तक सम्बन्ध है, इस ओर भारतेन्दु-युग से ही प्रयोग आरम्भ हो गये थे। उसके पूर्व भी एक अंक की रचनाओं को लघु रास ग्रन्थों में देखा जा सकता है। कृष्ण-भक्ति के सम्प्रदायों द्वारा वृन्दावन में अभिनीत रासलीला के नाट्यरूपों में भी एकांकी का विशिष्ट भावमय प्रवाह दिखायी देता है। भक्तों के लीला नाटकों में भी यह परम्परा विद्यमान रही है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवं उनके सहयोगियों ने प्राचीन संस्कृत एकांकी के प्रति आस्था रखते हुए भी बँगला और अंग्रेजी एकांकियों की कला को अपनाने का प्रयास किया। इनमें विषय-तत्त्व की दृष्टि से नवीनता और यथार्थ बोध की प्रवृत्ति विद्यमान है, परन्तु नये-नये एकांकी शिल्प के प्रति ये उतने सचेत नहीं रह पाये। एकांकी के विकास का संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है—

हिन्दी में एकांकी का प्रचलन नाटक के साथ **भारतेन्दु-युग** में ही हुआ था। स्वयं भारतेन्दु जी ने संस्कृत परम्परा पर आधारित मौलिक एकांकियों की रचना की। 'अन्धेर नगरी', 'प्रेम योगिनी', 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' उनके मौलिक प्रहसन हैं। भारतेन्दु जी के एकांकियों का नाट्यरूप प्राचीन शैली पर आधारित है, किन्तु उनमें प्रस्तुत की गयी समस्याएँ सर्वथा नवीन हैं। भारतेन्दु जी के अतिरिक्त इस युग में राधाचरण गोस्वामी, पं0 बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', किशोरीलाल गोस्वामी, अम्बिकादत्त व्यास, राधाकृष्णदास आदि ने भी विविध प्रहसनों तथा एकांकियों की रचना की। भारतेन्दु-युग में हिन्दी एकांकी का उद्‌भव माना जाता है।

शिल्प की दृष्टि से **द्विवेदी-युग** भारतेन्दु-युग से एक कदम आगे बढ़ा अर्थात् द्विवेदी-युग में हिन्दी एकांकी का विकास हुआ। इस युग में प्रहसन और व्यंग्य की कोटि में आनेवाले अनेक एकांकियों की रचना हुई। इस युग में नियन्त्रण की पुरानी कठोर संस्कृत पद्धति छूटने लगी और नये ढंग के एकांकी लिखे जाने लगे। नयी समस्याएँ, विचारधारा एवं गद्य की शिष्ट भाषा का प्रयोग आरम्भ हो गया। इस प्रकार के एकांकियों में 'चुंगी की उम्मीदवारी' (बदरीनाथ भट्ट); 'रेशमी रूमाल', 'किसमिस' (रामसिंह वर्मा), 'मूर्ख मण्डली' (रूपनारायण पाण्डेय), 'शेरसिंह' (मंगलाप्रसाद विश्वकर्मा), 'कृष्णा' (सियारामशरण गुप्त); 'नीला', 'दुर्गावती', 'पन्ना' (ब्रजलाल शास्त्री); 'चार बेचारे' (पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'); 'आनरेरी मजिस्ट्रेट' (सुदर्शन) आदि एकांकी उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक युग का प्रथम एकांकी जयशंकर प्रसाद का 'एक घूँट' माना जाता है। यद्यपि इस एकांकी में भी संस्कृत नाट्य-कला की ओर झुकाव परिलक्षित होता है, फिर भी इसमें आधुनिक एकांकी-कला का पूर्ण निर्वाह हुआ है। प्रसाद जी के पश्चात् तो डॉ0 रामकुमार वर्मा, भुवनेश्वरप्रसाद मिश्र, लक्ष्मीनारायण मिश्र, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', उदयशंकर भट्ट, सेठ गोविन्ददास आदि एकांकीकारों ने तीव्र गति से हिन्दी एकांकी साहित्य को समृद्ध किया। इनमें से कुछ प्रमुख एकांकीकारों के योगदान का संक्षिप्त परिचय अग्रवर्णित है—

डॉ0 रामकुमार वर्मा ने एकांकी-रचना को अपनी साहित्य-साधना का लक्ष्य बनाया और हिन्दी में एकांकी के अभाव की पूर्ति की। उनका पहला एकांकी 'बादल की मृत्यु' 1930 ई0 में प्रकाशित हुआ था। वर्मा जी ने सौ से भी अधिक

एकांकियों की रचना की है। इन एकांकियों के विषय सामाजिक और ऐतिहासिक दोनों ही प्रकार के हैं। डॉ0 रामकुमार वर्मा की 'पृथ्वीराज की आँखें' तथा अन्य रचनाएँ भारतीय परिवेश का विशेष निर्वाह करती हैं। पाश्चात्य शिल्प को अपनाते हुए भी विषयवस्तु, चरित्रांकन तथा सांस्कृतिक वातावरण की रुचि में निजी भारतीय परम्परा के प्रति सजग रहने के कारण डॉ0 रामकुमार वर्मा आधुनिक हिन्दी एकांकी के जनक कहे जाते हैं। इनके एकांकियों में भारतीय आदर्श, त्याग, तपस्या, दया, करुणा आदि गुण सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं।

भुवनेश्वरप्रसाद का 'कारवाँ' एकांकी-संग्रह सन् 1935 ई0 में प्रकाशित हुआ था। उसमें संगृहीत एकांकी इस क्षेत्र में नये प्रयोग थे, लेकिन उस पर पाश्चात्य प्रभाव इतना अधिक है कि 'कारवाँ' अपनी जातीय परम्परा से कटा हुआ प्रतीत होता है लेकिन भाषा की शक्ति, उपमानों की नवीनता, मनोरम शब्द-विधान आदि के कारण इसमें अद्भुत आकर्षण आ गया है।

उदयशंकर भट्ट का पहला एकांकी-संग्रह 'अभिनव एकांकी' के नाम से 1940 ई0 में प्रकाशित हुआ था। इसके पश्चात् उन्होंने सामाजिक, ऐतिहासिक, पौराणिक, मनोवैज्ञानिक आदि अनेक विषयों पर सैकड़ों एकांकियों की रचना की। 'वर निर्वाचन', 'पर्दे के पीछे', 'नये मेहमान', 'गिरती दीवारें' आदि अनेक प्रसिद्ध एकांकी हैं।

लक्ष्मीनारायण मिश्र के एकांकियों में 'अशोक वन', 'प्रलय के पंख पर', 'बलहीन', 'स्वर्ग में विप्लव' आदि उल्लेखनीय हैं। इनमें पौराणिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि सभी प्रकार की समस्याओं को चित्रित किया गया है।

जगदीशचन्द्र माथुर बहुत पहले से एकांकी लिखते रहे हैं। इनका पहला एकांकी 'मेरी बाँसुरी' सन् 1936 ई0 में 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। इसके पश्चात् उनके अनेक एकांकी प्रकाशित हुए जिनमें 'भोर का तारा', 'कलिंग विजय', 'खण्डहर', 'घोंसले', 'शारदीया' आदि मुख्य हैं। इन्होंने अपने एकांकियों के लिए मध्यमवर्गीय जीवन की अनेक समस्याएँ ली हैं, जिनके माध्यम से समाज के पाखण्ड तथा रूढ़ियों पर प्रहार करते हैं।

सेठ गोविन्ददास ने ऐतिहासिक, पौराणिक, राजनीतिक आदि विभिन्न विषयों पर एकांकियों की रचना की है। इनके एकांकियों में 'ईद और होली', 'स्पर्द्धा', 'मैत्री' आदि उत्तम कोटि के समस्यामूलक एकांकी हैं। ये भाषा-शैली, शिल्प, विचार-प्रतिपादन आदि सभी दृष्टियों से प्रभावपूर्ण हैं। समस्याओं का व्यावहारिक हल ढूँढ़ने में इन्होंने सतर्कता बरती है, पर उनकी गहराई में बैठने का प्रयास कम किया है।

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने अपने एकांकियों में समाज की विविध समस्याओं को सफलतापूर्वक चित्रित किया है। 'अश्क' जी के दो दर्जन से अधिक एकांकी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'लक्ष्मी का स्वागत', 'स्वर्ग की झलक', 'पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ', 'अधिकार का रक्षक' आदि इनके उल्लेखनीय एकांकी हैं। **विष्णु प्रभाकर** ने भी सामाजिक, राजनीतिक, हास्य-व्यंग्यप्रधान तथा मनोवैज्ञानिक एकांकी लिखे हैं।

एकांकी के क्षेत्र में **गणेशप्रसाद द्विवेदी, भगवतीचरण वर्मा, वृन्दावनलाल वर्मा** आदि ने भी योगदान दिया है। स्वतन्त्रता के पश्चात् अनेक नयी प्रतिभाओं ने एकांकी के क्षेत्र में प्रवेश किया। इनमें **विनोद रस्तोगी, जयनाथ नलिन, मोहनसिंह सेंगर, लक्ष्मीनारायण लाल, रामवृक्ष बेनीपुरी, सत्येन्द्र शरत, धर्मवीर भारती, चन्द्रशेखर** आदि के नाम आदर के साथ लिये जा सकते हैं।

आज पुरानी पीढ़ी के एकांकीकारों की अपेक्षा नयी पीढ़ी के एकांकीकारों में युग की नयी कुण्ठाओं, वर्जनाओं और विडम्बनाओं की अभिव्यक्ति के प्रति विशेष आग्रह दिखलायी देता है। पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों के प्रति नये एकांकीकारों ने एक नया रुख अपनाया है। वे पुरानी कथा लेकर उसे आज की समस्याओं के सन्दर्भ में प्रस्तुत करते हैं। पुराने चरित्रों का अंकन नवीन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किया जाता है। वे आज के हमारे-जैसे ही पात्र प्रतीत होते हैं और उनकी समस्याएँ आज की मनोवृत्ति को प्रतिबिम्बित करने में समर्थ होती हैं। पाश्चात्य एकांकी-शिल्प का उपयोग करते हुए भी कुछ एकांकीकार प्राचीन संस्कृत नाट्यशास्त्र से प्रेरणा लेकर मौलिक भारतीय एकांकी का स्वरूप विकसित करने में तत्पर हैं।

युगीन परिस्थितियों ने एकांकी के स्वरूप-निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। अब पुराना सब-कुछ ध्वस्त हो रहा है और नयी रूप-रेखा प्रस्तुत हो रही है। सामाजिक जीवन और विचार दोनों ही क्षेत्रों में उत्क्रान्ति हो रही है। फलतः साहित्यकार के ऊपर नयी जिम्मेदारियाँ आयी हैं। प्रतिदिन स्थितियों में परिवर्तन हो रहा है और इस नवीन सामयिक सन्दर्भ से एकांकी भी प्रभावित है। एकांकीकारों के सामने भी भावबोध के नवीन स्तर, सौन्दर्यबोध के नये आयाम और कल्पना के नये क्षितिज उद्घाटित हो रहे हैं।

❖

संकलित एकांकियों का सारांश

प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक में संकलित एकांकी दृश्य एवं श्रव्य दोनों हैं। ये जितने रंगमंचीय हैं, उतने ही सुपाठ्य। विद्यार्थियों को एकांकी की कथावस्तु, संवाद-योजना, चरित्रांकन, भाषा-शैली, देश-काल एवं वातावरण और उद्देश्य आदि सभी तत्त्वों की जानकारी के साथ ही अभिनय के प्रति भी जागरूक बनाने की आवश्यकता है। इसमें पाँच एकांकी संकलित किये गये हैं जो प्रतिपाद्य और शिल्प की दृष्टि से विशिष्ट कोटि की कलाकृतियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। कक्षा 9 के विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक सोच को दृष्टिगत रखते हुए ये एकांकी पाठ्य-पुस्तक में संकलित किये गये हैं, जो भारतीय संस्कृति, राष्ट्रीय प्रेम, भावात्मक एकता, सामाजिकता एवं आधुनिक समस्याओं से छात्रों को परिचित कराते हैं। उपेन्द्रनाथ 'अश्क' जी ने स्वयं अपने एकांकी **'लक्ष्मी का स्वागत'** के विषय में कहा था कि '' 'लक्ष्मी का स्वागत' मेरा पहला नख से शिख तक चुस्त-दुरुस्त एकांकी है।'' पाठ्य-पुस्तक में संकलित सभी एकांकियों का सारांश नीचे दिया जा रहा है।

दीपदान

'दीपदान' डॉ0 रामकुमार वर्मा का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक एकांकी है। इस एकांकी में वर्मा जी ने बलिदान और त्याग की मूर्ति पन्ना धाय की ऐतिहासिक गौरव-गाथा का चित्रण किया है। संक्षेप में 'दीपदान' एकांकी की कथावस्तु इस प्रकार है—

चित्तौड़गढ़ के महाराजा राणा संग्रामसिंह के निधन के पश्चात् उनके अनुज पृथ्वीराज का दासी-पुत्र बनवीर चित्तौड़ का राजा बनकर निष्कण्टक राज्य करना चाहता है। कुल-परम्परा के अनुसार संग्रामसिंह के पुत्र कुँवर उदयसिंह को राज्य मिलना चाहिए था, किन्तु उदयसिंह अल्पवयस्क होने के कारण उसका उत्तराधिकारी नहीं था। अतः उदयसिंह के संरक्षक के रूप में बनवीर को चित्तौड़गढ़ की गद्दी सौंप दी गयी। दीपदान उत्सव के बहाने वह कुँवर उदयसिंह की हत्या का षड्यन्त्र रचता है। कुँवर उदयसिंह का पालन-पोषण करनेवाली पन्ना धाय चित्तौड़ के राजमहल में बैठी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। उदयसिंह तुलजा भवानी के मन्दिर से लड़कियों के नृत्य को देखकर आ जाता है और पन्ना धाय को लेकर फिर जाना चाहता है। अनहोनी की आशंका से पन्ना धाय उसे पुनः वहाँ नहीं जाने देती। कुँवर उदयसिंह रूठकर शयन-कक्ष को छोड़कर दूसरे कक्ष में सोने चला जाता है। कुछ समय पश्चात् रावल सरूपसिंह की पुत्री सोना, जो कुँवर के साथ खेला करती थी, कुँवर को अपने साथ ले जाने के लिए पन्ना के पास आती है। सोना को बनवीर ने उदयसिंह को साथ लाने के लिए भेजा था। पन्ना बनवीर के इस षड्यन्त्र को भाँप लेती है और वह सोना से टाल-मटोल कर देती है।

कुछ ही क्षण के पश्चात् कुँवर को ढूँढ़ता हुआ पन्ना का पुत्र चन्दन आता है। उदयसिंह के सो जाने की बात सुनकर वह चला जाता है। उसी समय सामली नाम की दासी चीखती हुई पन्ना के पास आकर बताती है कि बनवीर ने सोते हुए विक्रमादित्य की हत्या कर दी है और अब वह इधर ही कुँवर की हत्या के लिए आ रहा है। दासी की बात सुनकर पन्ना व्याकुल हो जाती है और कुँवर की रक्षा का उपाय सोचने लगती है। कुँवर को लेकर पन्ना कुम्भलगढ़ भाग जाना चाहती है, लेकिन राजमहल को तो चारों ओर से बनवीर के सैनिकों ने घेर लिया है। संयोगवश महल का जूठन उठानेवाला कीरत बारी एक बड़ी टोकरी लेकर वहाँ आ जाता है। पन्ना दृढ़तापूर्वक उससे सारी बातें बताती है। स्वामिभक्त कीरत बारी पन्ना की योजनानुसार उदयसिंह को टोकरी में लिटाकर महल से बाहर लेकर चला गया। अब पन्ना सोचती है कि बनवीर को कुँवर के विषय में क्या बतायेगी। अन्ततः वह सोचती है कि कुँवर उदयसिंह की शय्या पर चादर उढ़ाकर अपने पुत्र चन्दन को सुला देगी। उसी समय वहाँ चन्दन आ जाता है। पन्ना उसे कुँवर उदयसिंह की शय्या पर लिटाकर, लोरियाँ गाते हुए सुला देती है। इस प्रकार उदयसिंह की रक्षा के लिए अपने पुत्र का बलिदान करने को पन्ना तत्पर हो जाती है।

उसी समय बनवीर हाथ में नंगी तलवार लिये उदयसिंह के कक्ष में प्रवेश करता है। वह जागीर का प्रलोभन देकर पन्ना को अपने षड्यन्त्र में सहायक बनाना चाहता है, किन्तु पन्ना अपने कर्त्तव्य पर दृढ़ रहती है। वह बनवीर को फटकारती है। क्रोधित बनवीर चन्दन को उदयसिंह समझकर पन्ना की आँखों के सामने ही तलवार से मौत के घाट उतार देता है। वह क्रूरतापूर्ण शब्दों में कहने लगता है, ''यही है मेरे मार्ग का कण्टक!'' बनवीर के इस क्रूर काण्ड और पन्ना के अपूर्व त्याग के साथ एकांकी समाप्त

हो जाता है। एकांकीकार ने पन्ना के चरित्र से यह व्यक्त किया है कि राष्ट्रीय हित के लिए व्यक्तिगत एवं पारिवारिक हित का बलिदान करना पड़ता है। त्याग से मनुष्य महान् तथा स्वार्थलिप्सा से नीच बन जाता है। ♦

नये मेहमान

'नये मेहमान' उदयशंकर भट्ट जी का समस्या-प्रधान एकांकी है। इसमें महानगरों के मध्यमवर्गीय जीवन का सजीव और यथार्थ चित्रण हुआ है। बड़े-बड़े नगरों में आवास की समस्याएँ बहुत बढ़ गयी हैं। मेहमानों के आ जाने पर ये समस्याएँ कितनी अधिक बढ़ जाती हैं, किस प्रकार घर के सदस्यों का हृदय संकुचित हो जाता है, इस तथ्य का बड़ा रोचक और सजीव चित्रण प्रस्तुत एकांकी में हुआ है। इस एकांकी का सारांश इस प्रकार है—

एकांकी का मुख्य पात्र विश्वनाथ है। वह एक बड़े नगर की घनी बस्ती में रहता है। उसका मकान बहुत छोटा है। उसी में वह पत्नी रेवती तथा प्रमोद एवं किरण नाम के दो बच्चों के साथ जीवन व्यतीत कर रहा है। उसका छोटा बच्चा बीमार है, पत्नी का गर्मी के कारण बुरा हाल है, रात के आठ बज चुके हैं। मकान की छत बहुत छोटी है, उस पर चारपाई बिछाने तक का भी स्थान नहीं है। पड़ोसिन बहुत कठोर स्वभाव की है, वह अपने खाली छत का प्रयोग नहीं करने देती। दोनों पति-पत्नी एक-दूसरे को आराम पहुँचाने के विचार से परस्पर एक-दूसरे से छत पर सोने का आग्रह करते हैं। अन्ततः विश्वनाथ छत पर सोने के लिए तैयार हो जाता है।

जैसे ही वे दोनों सोने की तैयारी करते हैं, वैसे ही बाहर से कोई दरवाजा खटखटाता है। विश्वनाथ दरवाजा खोलता है तो दो अपरिचित व्यक्ति बिस्तर और सन्दूक के साथ अन्दर आ जाते हैं। उनके नाम बाबूलाल और नन्हेंमल हैं। विश्वनाथ उन्हें नहीं पहचानता, फिर भी वे बेशर्मी से घर में रुक जाते हैं और विश्वनाथ से बर्फ के ठण्डे पानी की माँग करते हैं। विश्वनाथ उनका पता पूछता है तो वे दोनों बातों में उड़ा देते हैं। विश्वनाथ संकोच के कारण कुछ नहीं कह पाता। वे दोनों पानी पीते हैं और पड़ोसी की छत पर पानी फैला देते हैं। पड़ोसी को गुस्से में देखकर विश्वनाथ क्षमा-याचना कर लेता है। जब विश्वनाथ दबे मन से उनसे भोजन के लिए पूछता है तो वे तुरन्त 'हाँ' कर देते हैं। रेवती खाना बनाने के लिए तैयार नहीं होती तथा बाहर से भी भोजन नहीं मँगाने देती और अपने पति से जिद करती है कि पहले इनका पता-ठिकाना पूछो। जब विश्वनाथ साफ-साफ पूछता है तो पता चलता है कि वे भूल से उसके घर आ गये हैं। वास्तव में उन्हें पड़ोस के ही कविराज रामलाल के घर जाना था। यह ज्ञात होने पर विश्वनाथ के बच्चे उन्हें सही स्थान पर पहुँचा आते हैं।

ज्यों ही पति-पत्नी इन दोनों से मुक्त होते हैं और सब लोग सोने ही वाले थे कि नीचे फिर दरवाजा खटखटाने की आवाज आती है। रेवती अपने भाई का स्वर पहचानकर प्रसन्न हो जाती है। रेवती को इस बात का दुःख है कि उसका भाई भी मकान ढूँढ़ता रहा और इतना परेशान होने के बाद सही स्थान पर पहुँचा है। बच्चे मिठाई और बर्फ लाने के लिए जाते हैं। भाई के बार-बार मना करने पर भी वह खाना बनाती है। विश्वनाथ मुस्कराकर व्यंग्य में कहता है—"कहो, अब?" इस पर रेवती कहती है—"अब क्या, मैं खाना बनाऊँगी, भैया भूखे नहीं सो सकते।" यहीं पर एकांकी समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुत एकांकी में लेखक का उद्देश्य नगर की आवास-समस्या का चित्रण करना है। आज नगरों में आवास-समस्या इतनी जटिल है कि लोग नये मेहमानों से कतराते हैं। वे सगे-सम्बन्धी को तो कुछ समय के लिए रख सकते हैं, किन्तु एकाएक आये अतिथि से घबरा जाते हैं। ♦

व्यवहार

सेठ गोविन्ददास की तीन दृश्यों की एकांकी **'व्यवहार'** में कुल चार पात्र हैं–रघुराजसिंह जमींदार, नर्मदाशंकर उनके स्टेट का मैनेजर, एक किसान चूरामन और क्रान्तिचन्द्र जो चूरामन का पुत्र है।

पहला दृश्य प्रातःकाल नगर में स्थित जमींदार रघुराजसिंह के महल की एक बालकनी का है जो सुन्दर और सजा हुआ है। पच्चीस वर्षीय नवयुवक जमींदार रघुराजसिंह बालकनी के एक कोने में खड़ा एक छोटी-सी फैन्सी दूरबीन से पीछे के दरख्तों से परे की कोई वस्तु देख रहा है। उसके नजदीक उसके स्टेट के मैनेजर पैंसठ वर्षीय नर्मदाशंकर खड़ा है। रघुराजसिंह की बहन के विवाह में किसानों को भोज में सपरिवार निमन्त्रित किया गया था। रघुराजसिंह के पूछने पर नर्मदाशंकर बताता है कि मय बाल-बच्चों के पच्चीस हजार से कम किसान नहीं आयेंगे। किन्तु पहले की शादियों में सिर्फ मर्द बुलाये जाते थे, वे भी

चुने हुए घरों के और घर-पीछे एक आदमी। रघुराजसिंह के इस प्रथा को गलत बताने पर नर्मदाशंकर क्षमा माँगते हुए कहता है कि आपकी कार्य-पद्धति सही नहीं है। आपने काम सँभालते ही किसानों का सारा कर्ज माफ कर दिया। भले ही वसूली नहीं होती किन्तु, किसानों पर दबाव रखे बिना जमींदारी नहीं चलती है। आपने बिना नजराना लिये जमीन दी, वह भी गलत था। निमन्त्रण में खर्च बहुत होगा और व्यवहार उतना नहीं मिलेगा। रघुराजसिंह के यह कहने पर कि किसी से व्यवहार नहीं लिया जायगा तब नर्मदाशंकर उन्हें आश्चर्य से देखता है।

दूसरा दृश्य प्रातःकाल गाँव के एक मकान का कोठा है। दीवाल से सटकर एक लाल रंग की जाजम बिछी हुई है जिस पर कुछ किसान लोग बैठे हैं। वहाँ 22-23 वर्षीय एक नवयुवक क्रान्तिचन्द्र जो कालेज का पढ़ा और किसान चूरामन का बेटा है, रोष में तमतमाया बैठा है। उसके चेहरे से क्रूरता टपक रही है। वह किसानों को एकत्र करके जमींदार के विरुद्ध भड़काकर निमन्त्रण में न जाने के लिए लामबन्द कर रहा है। वह जमींदार की उदारता, कर्ज माफ करने, बिना नजराना लिये गरीब किसानों को जमीन देने को जमींदार की लाचारी बताता है। वह कहता है कि जो आपको लूट रहा है, जो आपका खून पी रहा है, उस लुटेरे डाकू के भय से आप निमन्त्रण में जायँगे? आप लोग डरते हैं, किन्तु मैं नहीं डरता। भय से अधिक बुरी वस्तु मैं संसार में और कोई नहीं मानता। मैं ये सब बातें ऊँचे स्वर में कहने के लिए तैयार ही नहीं, स्वयं जमींदार के सम्मुख कहने, उसे लिखकर भेजने के लिए प्रस्तुत हूँ। अन्त में वह सब किसानों को रोककर, किसानों की तरफ से जमींदार को पत्र भेज देता है।

तीसरा दृश्य मध्याह्न काल रघुराजसिंह के महल की बालकनी का है। नर्मदाशंकर हाथ में एक खुली चिट्ठी लिये आता है और उसे रघुराजसिंह के हाथ में दे देता है। रघुराजसिंह चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते एकबारगी कुरसी पर बैठ जाते हैं। ग्लानि से उनका सिर झुक जाता है। नर्मदाशंकर एकटक रघुराजसिंह की सारी मुद्रा को देखता है, फिर क्षुब्ध होकर कहता है–"देखा राजा साहब, देखा, आपने इन किसानों की बदमाशी को? आप इन पर प्राण देते हैं...जमींदार की बहन के विवाह-भोज का किसानों द्वारा बहिष्कार!" रघुराजसिंह ने कहा कि किसानों के प्रतिनिधि क्रान्तिचन्द्र ने ठीक तो लिखा है–"भक्षक और भक्ष्य का कैसा व्यवहार?" मेरी गलती थी जो मैं यह समझता था कि किसानों का मैं हित कर सकता हूँ। अब तो मेरे सामने केवल दो विकल्प हैं–सच्चा जमींदार बनूँ या उन्हीं के सच्चे हित में जीवन व्यतीत करूँ। ♦

लक्ष्मी का स्वागत

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' द्वारा लिखित **'लक्ष्मी का स्वागत'** एक मर्मस्पर्शी एवं हृदयद्रावक एकांकी है। इस एकांकी की कथावस्तु पारिवारिक होते हुए भी दूषित सामाजिक मान्यताओं की ओर संकेत करती है और आज के मानव की धन-लिप्सा, स्वार्थ-भावना, हृदयहीनता और क्रूरता का यथार्थ रूप प्रस्तुत करती है। इस एकांकी में एकांकीकार ने दहेज के लोभी उन माता-पिता का चित्रण किया है जो दहेज में काफी धन प्राप्त करने के उद्देश्य से अपने पुत्र रौशन का पुनर्विवाह उसकी पत्नी सरला की मृत्यु के चौथे दिन ही कर देना चाहते हैं। एकांकी की कथावस्तु इस प्रकार है—

जालन्धर के एक मध्यमवर्गीय परिवार का सदस्य रौशन अपने पुत्र अरुण की बढ़ती बीमारी से बहुत दुःखी है। वह बार-बार अपने बेटे की तड़फड़ाती स्थिति को देखकर घबरा उठता है। उसकी पत्नी को मरे हुए अभी कुछ ही दिन तो हुआ है। उसके दुःख को वह अभी भूल न पाया था कि बच्चा डिफ्थीरिया (गले के संक्रामक रोग) से पीड़ित हो गया। उसकी हालत प्रतिक्षण बिगड़ती जा रही है। वह अपने छोटे भाई भाषी को डॉक्टर बुलाने के लिए भेजता है। बाहर मूसलधार वर्षा, आँधी और ओले जैसे उसके मन को भयभीत कर रहे हैं। रौशन अपने मित्र सुरेन्द्र से कह रहा है—"मेरा दिल डर रहा है सुरेन्द्र, कहीं अपनी माँ की तरह अरुण भी मुझे धोखा न दे जाय?" उसको विह्वल देखकर सुरेन्द्र धैर्य बँधाता हुआ कहता है—"हौसला करो! अभी डॉक्टर आ जायगा।" डॉक्टर आकर बताता है कि बच्चे की हालत ठीक नहीं है। एक इंजेक्शन दे दिया है और गले में पन्द्रह-पन्द्रह मिनट बाद दवाई की दो-चार बूँदें डालते रहें। इसका कोई दूसरा इलाज नहीं है। बस! भगवान् पर भरोसा रखें। उधर माँ भाषी से दरवाजे पर देखने के लिए कहती है, तो भाषी पूछता है, वहाँ कौन है? इस पर माँ कहती है कि वे लोग होंगे जो सरला के मरने पर अपनी लड़की के लिए कह रहे थे। भाषी लड़कीवालों को नीचे बिठाकर माँ के पास आकर बताता है कि उनके साथ एक औरत भी है। रौशन के मित्र सुरेन्द्र से माँ कहती है कि रौशन को समझाकर वह नीचे ले आये। रौशन पुत्र-प्रेम में पागल-सा हो गया है। वह माँ से क्रोध में भरकर कहता है–"उनसे कहो, जहाँ से आये हैं, वहीं चले जायँ। .....मैं नहीं जानता, मैं पागल हूँ या आप। ..... शादी, शादी, शादी! क्या शादी ही दुनिया में सब-कुछ है? घर में बच्चा मर रहा है और तुम्हें शादी

की सूझ रही है।'' इतना होने पर भी रौशन के पिता शगुन लेने को तैयार हैं। उन्होंने पता लगा लिया कि सियालकोट में इनकी बड़ी भारी फर्म है और इनके यहाँ हजारों का लेन-देन है। अन्त में रौशन के पिता शगुन लेकर माँ को बधाई लेने आते हैं। इसी समय अरुण की मौत हो जाती है। रौशन चिढ़कर कहता है, ''हाँ, नाचो, गाओ, खुशियाँ मनाओ।'' पिता के हाथ से हुक्का गिर पड़ता है और मुँह खुला रह जाता है। माँ चीख मारकर सिर थामे धम्म से बैठ जाती है। सुरेन्द्र कहता है·····''माँ जी, जाकर दाने लाओ और दीये का प्रबन्ध करो।'' यहीं पर एकांकी समाप्त हो जाता है।

निश्चय ही **'लक्ष्मी का स्वागत'** एकांकी का कथानक अत्यधिक संवेदनशील और भाव-विभोर करनेवाला है। वास्तव में 'अश्क' जी ने सामाजिक रीति-नीति के मूल में छिपी हुई मानव-मन की निष्ठुरता और हृदयहीनता को ही वाणी दी है। कथानक सुगठित, सशक्त एवं प्रभावशाली बन पड़ा है, जिससे 'अश्क' जी की एकांकी-कला का समृद्ध रूप सामने उपस्थित होता है। ♦

सीमा-रेखा

विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित **'सीमा-रेखा'** राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत एकांकी है। एकांकीकार का मत है कि जनतन्त्र के वास्तविक स्वरूप में अनेक विसंगतियाँ उत्पन्न हो रही हैं। इसके कारण राष्ट्रीय हित की निरन्तर हत्या हो रही है। जनता में राष्ट्रीय चेतना का अभाव है। वह आन्दोलन करती है, परिणामस्वरूप राष्ट्रीय सम्पत्ति की अपार क्षति होती है। एकांकीकार ने इस समस्या को ही अपने एकांकी की कथावस्तु बनाया है। एकांकीकार ने चार भाइयों के रूप में स्वतन्त्र भारत के चार वर्गों के प्रतिनिधियों के द्वन्द्व को प्रस्तुत किया है। विभिन्न घटनाओं के माध्यम से इस बात को भी सिद्ध किया गया है कि जनतन्त्र में सरकार और जनता के बीच कोई सीमा-रेखा नहीं होती। प्रस्तुत एकांकी की कथावस्तु इस प्रकार है—

एकांकी में चार भाइयों का वर्णन है। चारों भाइयों में एक सत्ता पक्ष का नेता है शरतचन्द्र तथा एक विरोधी पक्ष का है—सुभाषचन्द्र। लक्ष्मीचन्द्र एक व्यवसायी है जबकि विजय पुलिस में कप्तान। अरविन्द बड़े भाई लक्ष्मीचन्द्र का पुत्र है। इन चारों भाइयों की पत्नियाँ हैं—तारा, अन्नपूर्णा, सविता और उमा। एक दिन बैंक के पास अन्दोलनकारियों की भीड़ बेकाबू हो जाती है और पुलिस को गोली चलानी पड़ती है। एकांकी का पर्दा उपमन्त्री शरतचन्द्र की बैठक से खुलता है। फोन पर सूचना मिलती है कि पुलिस ने उग्र भीड़ पर गोली चला दी है। इस गोलीबारी में पाँच आदमी मारे गये हैं और बीस घायल हो गये हैं। घायलों को अस्पताल में पहुँचा दिया गया है। शरतचन्द्र की पत्नी इस कार्य को जहाँ अनुचित बताती है, वहीं लक्ष्मीचन्द्र बिल्कुल उचित बताते हैं। पुलिस कप्तान विजय भी अपने कदम को उचित बताता है। वह कहता है कि जनता को कानून अपने हाथ में लेने का कोई अधिकार नहीं है और ऐसे समय पर यही एक रास्ता है।

इसी समय विरोधी पक्ष का जननेता सुभाषचन्द्र आता है। वह भी पुलिस के गोली काण्ड की निन्दा करता है और उपमन्त्री से इस घृणित कार्य के लिए उत्तरदायी पुलिस अधिकारी को निलम्बित करने का अनुरोध करता है। सुभाष और सविता पुनः कहते हैं कि जनतन्त्र का अर्थ ही जनता का राज्य है। तभी यह सूचना मिलती है कि अरविन्द पुलिस की गोली में मारा गया।

लक्ष्मीचन्द्र और उनकी पत्नी अन्नपूर्णा इसे विजय की क्रूरता कहते हैं। विजय को अरविन्द के भीड़ में होने का पता नहीं है। विजय को अपनी गलती का अहसास होता है। विरोधी दल के नेता सुभाषचन्द्र और पुलिस कप्तान विजय फिर उमड़ती हुई भीड़ को नियन्त्रित करने के लिए आगे बढ़ते हैं। विजय गोली चलाने से इन्कार कर देता है जिससे असामाजिक तत्त्वों की भीड़ में ये दोनों भाई कुचलकर मर जाते हैं। सारा वातावरण करुणा से भर जाता है। भीड़ शान्त हो जाती है। तीनों के शव बैठक में लाकर रख दिये जाते हैं। शरतचन्द्र तीनों को देखकर कहता है–''यह देखो, कमरे में तीनों लेटे हैं। कभी नहीं उठेंगे। ये अरविन्द और सुभाष हैं–यह जनता की क्षति है और इधर यह विजय है–यह सरकार की क्षति है।'' अन्नपूर्णा रोकर इसे घर की क्षति बताती है। सविता कहती है—''नहीं जीजी! यह उनकी नहीं, सारे देश की क्षति है, देश क्या हमसे और हम क्या देश से अलग हैं?'' शरत उसकी बात का समर्थन करता है। यहीं पर एकांकी समाप्त हो जाता है।

इस एकांकी की कथावस्तु बड़ी सजीव, विचारोत्तेजक, गतिशील, घटनामयी और मर्मस्पर्शी है। संकलन-त्रय का भरपूर निर्वाह है। सम्पूर्ण कथानक उपमन्त्री शरतचन्द्र के ड्राइंग-रूम में कुछ ही मिनटों में घटित हुआ है। शिल्प की दृष्टि से यह रेडियो-रूपक है, किन्तु इसका अभिनय भी सफलतापूर्वक हो सकता है। ♦